

॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

भुंजते पितरो देवा हव्यं कव्यं मथाक्षयं ॥ श्रावयं श्रापि विप्रैर्द्रान्यर्वसुप्रयतो नरः ॥ १२ ॥ ऋषीणां देवतानां च पितॄणां चैव नित्यदा ॥ भवत्यभिमतः श्रीमान्धर्मेषु
 प्रयतः सदा ॥ १३ ॥ कृत्वा पिपापकं कर्म महापातकवर्जितं ॥ रहस्यधर्मं श्रुत्वे मं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १४ ॥ भीष्म उवाच ॥ एतद्धर्मरहस्यं वै देवतानां नराधि-
 प ॥ व्यासो हिष्टं मया प्रोक्तं सर्वदेवनमस्कृतं ॥ १५ ॥ पृथिवीरत्नसंपूर्णं ज्ञानं चेदमनुत्तमं ॥ इदमेव ततः श्राव्यमिति मन्येत धर्मवित् ॥ १६ ॥ नाश्रद्धयानायननास्ति
 कायननष्टधर्माय न निर्घृणाय ॥ न हेतुदुष्टाय गुरुद्विषे वानात्मभूताय निवेद्य मे तत् ॥ १७ ॥ इति श्री महाभारते अनुशासनपर्वणि आनुशास० दानधर्मस्कं-
 ददेवरहस्ये चतुस्त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥ ॥ ६४ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ केभोज्या ब्राह्मणस्य हे केभोज्याः क्षत्रियस्य ह ॥
 तथा वैश्यस्य केभोज्याः केशूद्रस्य च भारत ॥ ११ ॥ भीष्म उवाच ॥ ब्राह्मणा ब्राह्मणस्य हे भोज्या ये चैव क्षत्रियाः ॥ वैश्याश्चापि तथा भोज्याः शूद्राश्च परिवर्जि-
 ताः ॥ १२ ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या भोज्या वै क्षत्रियस्य ह ॥ वर्जनीयास्तु वै शूद्राः सर्वभक्ष्या विकर्मिणः ॥ १३ ॥ वैश्यास्तु भोज्या विप्राणां क्षत्रियाणां तथैव च ॥ नि-
 त्याग्नयो विविक्ताश्च चातुर्मास्य रताश्च ये ॥ १४ ॥ शूद्राणामथ यो भुंक्ते स भुंक्ते पृथिवीमलं ॥ मलं नृणां सपिबति मलं भुंक्ते जनस्य च ॥ १५ ॥ शूद्राणां यस्तथा भुंक्ते स
 भुंक्ते पृथिवीमलं ॥ पृथिवीमलमश्नंति ये द्विजाः शूद्रभोजिनः ॥ १६ ॥ शूद्रस्य कर्म निष्ठायां विकर्मस्योपि पच्यते ॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यो विकर्मस्यश्च पच्यते ॥ १७ ॥
 स्वाध्यायनिरता विप्रास्तथा स्वस्य यने नृणां ॥ रक्षणे क्षत्रियं प्राहुर्वै श्यं पुष्ट्यर्थं मेव च ॥ १८ ॥ करोति कर्म यद्दृष्टत्वा ह्युपजीवति ॥ कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यमकुत्सा
 वैश्यकर्मणि ॥ १९ ॥ शूद्रकर्म तु यः कुर्यादवहाय स्वकर्म च ॥ स विज्ञेयो यथा शूद्रो न च भोज्यः कदाचन ॥ २० ॥ चिकित्सकः काण्डपृष्ठः पुराध्यक्षः पुरोहितः ॥ सां-
 वत्सरो वृथा ध्यायी सर्वे ते शूद्रसंमिताः ॥ २१ ॥ शूद्रकर्म स्वर्थे तेषु यो भुंक्ते निरपन्नपः ॥ अभोज्य भोजनं भुक्त्वा भयं प्राप्नोतिदारुणं ॥ २२ ॥ कुलं वीर्यं च तेजश्च तिर्य-
 ग्यो नित्वमेव च ॥ स प्रयाति यथाश्वा वै निष्क्रियो धर्मवर्जितः ॥ २३ ॥ भुंक्ते चिकित्सकस्यान्नं तदन्नं च पुरीषवत् ॥ पुंश्चल्यन्नं च मूत्रं स्यात्कारुकां च शोणितं ॥
 ॥ २४ ॥ विद्योपजीविनो न च यो भुंक्ते साधुसंमतः ॥ तदप्यन्नं यथा शौद्रं तत्साधुः परिवर्जयेत् ॥ २५ ॥

शूद्रान्नमेव वर्ज्यं किं तु शूद्रस्य कर्म निष्ठायां सेवायां वर्तमानो विकर्मस्थो विशिष्टकर्मस्थः संध्यावदनादियुक्तोपि पच्यते नरके इति शेषः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥